शिक्षक-आंदोलन और सामाजिक सक्रियता के अन्य पड़ाव*

श्याम नारायण मिश्र

भाग-I

युवक, क्या तुम शिक्षक बनोगे : शिक्षक आंदोलन की चुनौतियां

1940 और 50 के दशक में जब मैं विद्यार्थी था तब हाई स्कूल प्रायः जिला मुख्यालयों, रेलवे स्टेशनों के आस-पास या किसी बड़े ज़मींदार की हवेली से लगे बाज़ारों में ही हुआ करते थे। आज़ादी के बाद 1960 और 70 के दशक में गांव-गांव में जन सहयोग से विद्यालय खुलने लगे। इस प्रकार माध्यमिक शिक्षा का प्रसार तो हुआ, लेकिन इन विद्यालयों में काम करने वाले शिक्षकों की स्थिति बद से बदतर होती चली गई। बहुत सारे पढ़े-लिखे युवाओं ने बेहतर भविष्य की उम्मीद में इन विद्यालयों में शिक्षक के रूप में काम करना शुरू किया था। उनमें से अनेक लोगों के मन में शिक्षा के प्रति अनुराग भी था और आगे बढ़ने की ललक भी। वे अपना भला भी चाहते थे और समाज का भी, लेकिन अधिकांश ग्रामीण स्कूलों में शिक्षकों का स्वयं का भविष्य अनिश्चित था। विद्यालय के पास आय के स्रोत सीमित थे इसलिए वेतन समय पर और पूरा मिल नहीं पाता था। सरकार की ओर से यथोचित सहयोग मिल नहीं रहा था। इस बीच जिन शिक्षकों ने अपनी युवा अवस्था में इस पेशे को चुना था उनकी ज़िम्मेवारियां बढ़ रही थीं। इन्हीं परिस्थितियों में शिक्षक धीरे-धीरे संगठित होने लगे और दो दशकों के सांगठनिक कार्य और एकाधिक आंदोलनों के बाद अंततः 1980 में बिहार के माध्यमिक विद्यालयों का सरकारीकरण हुआ।

शिक्षक-संघ के सांगठनिक क्रियाकलापों में मैं निरंतर सक्रिय रहा। जैसा कि पहले के अध्यायों में वर्णित हुआ, मुझे एक समय केन्द्र सरकार की नौकरी भी मिली जिसमें नियमित वेतन भुगतान और पदोन्नति की गारंटी थी, लेकिन उस नौकरी के दौरान एकाध साल के भीतर ही मुझे यह समझ में आ गया कि अध्यापन के अलावा और किसी काम में मेरा मन नहीं रमेगा। ऐसी स्थिति में जब मैं अपनी स्थिति और अपने साथी अध्यापकों की स्थिति पर गौर करता था तो मन में कचोट-सी उठती थी। इन्हीं भावनाओं के साथ मैं शिक्षक-संघ की गतिविधियों में निरंतर सक्रिय रहता था। शिक्षक-संघ के साथ जुड़ाव ने मुझे विद्यालय के बाहर की दुनिया से जोड़े रखा। इन आंदोलनों ने मुझे निरंतर लिखने-पढ़ने की प्रेरणा भी दी। इस दौरान मेरी रचनाएं प्रकाशित होती रहीं और कई बड़े मंचों से हजारों शिक्षक साथियों के समक्ष कविता पाठ का मौका भी मिला।

शिक्षक-संघ पहले से ही मौजूद था, लेकिन उसमें ग्रामीण शिक्षकों की सक्रियता बढ़ती चली गई। शहर के स्कूलों के शिक्षक भी शिक्षक-संघ के सदस्य होते थे, लेकिन वे संघ की गतिविधियों में बहुत रुचि नहीं लेते थे। शहर के स्कूलों में प्रायः वेतन आदि का भुगतान नियमित रूप से हो जाता था। शहर के बहुत सारे स्कूल

* यह अनन्य प्रकाशन, नई दिल्ली से प्रकाशित अध्यापक श्याम नारायण मिश्र की आत्मकथा का एक अंश है। पुस्तक के बारे में विस्तृत ब्यौरा अगले पृष्ठ पर है।

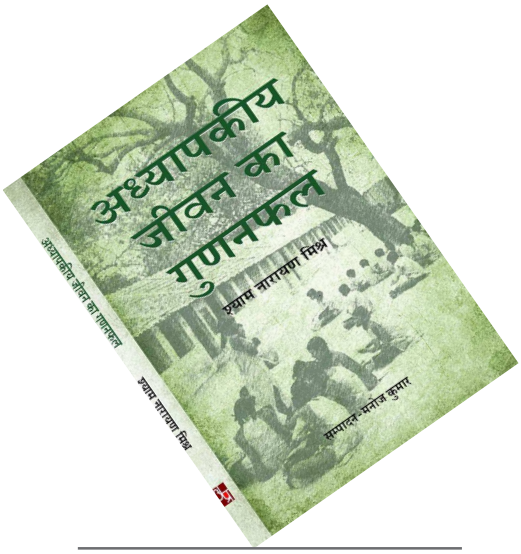

पुस्तक : अध्यापकीय जीवन का गुणनफल
लेखक : श्याम नारायण मिश्र
संपादन : मनोज कुमार
मूल्य : 200 रुपये (पेपर बैक)
प्रकाशक : अनन्य प्रकाशन, नई दिल्ली

पुस्तक मंगवाने के लिए 9205155356 वाट्सअप करें या लिंक पर जाकर अमेजन से खरीद सकते हैं : https://www.amazon.in/dp/B08JLWRN44

राजकीय स्कूलों की श्रेणी में आते थे और उनके शिक्षक राज्य के कर्मचारी माने जाते थे। उन स्कूलों के अलावा अगर शहरों के कुछ स्कूल राजकीय श्रेणी के स्कूल नहीं भी थे तब भी उन स्कूलों में विद्यार्थियों की संख्या अधिक होती थी। विद्यार्थियों की अधिक संख्या होने के कारण उन स्कूलों में संसाधनों की उतनी कमी नहीं थी। इस परिस्थितिवश शिक्षक-संघ से क्रमशः ग्रामीण शिक्षकों का जुड़ाव बढ़ता गया और शिक्षक-आंदोलन को नई ऊर्जा मिली।

संघ के कार्यों में मेरी सक्रियता विशेष रूप से 1968 के बाद बढ़ी। उस वर्ष उच्च विद्यालय, समर्था में शिक्षक-संघ की प्रखंड स्तरीय आम सभा आयोजित की गई। उस बैठक में मुझे अगले सत्र के लिए निर्विरोध प्रखंड अध्यक्ष चुना गया। उसके बाद से मैंने संघ के कार्यों में बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। मेरे सम्मुख संघ का जो भी कार्य आता था मैं उसे पूरी तत्परता से करता था। फलस्वरूप दो वर्ष बाद 1970 में मुझे रोसड़ा अनुमंडल का अध्यक्ष निर्विरोध चुना गया। जब अनुमंडल अध्यक्ष के रूप में मेरा पहला कार्यकाल समाप्त हुआ तो मैंने उच्च विद्यालय कुशेश्वर नामक स्थान में शिक्षक संघ की सभा बुलाई। इस बैठक में जब अगले सत्र के लिए अध्यक्ष पद के लिए मेरे नाम का प्रस्ताव आया तो कुछ विरोध के स्वर भी उभरे। विरोध करने वाले लोगों का कहना था कि शिक्षक-संघ के अध्यक्ष के रूप में मैं विद्यालयों का भ्रमण नहीं करता हूं। साथ ही कार्यालय के काम में शिक्षकों को जब समस्याओं का सामना करना पड़ता है तब मैं उनकी मदद नहीं कर पाता हूं। इस आरोप में आंशिक सच्चाई थी। अपने विद्यालय में व्यस्त होने के कारण मैं अलग-अलग स्कूलों का भ्रमण नहीं कर पाता था। जब बोलने की मेरी बारी आई तो मैंने शिक्षकों के आरोप को ख़ारिज नहीं करते हुए उन्हें अपनी सीमाओं से अवगत करवाया। मैंने कहा कि अनुमंडल अध्यक्ष होने के साथ-साथ मैं एक विद्यालय का प्रधानाध्यापक भी हूं, इसलिए मैं तमाम स्कूलों में निरंतर नहीं घूम सकता हूं। मैंने उनसे कहा कि हमें आपस में लगातार जीवंत संपर्क बनाए रखने के लिए डाक-तार विभाग का सहारा लेना चाहिए। आप अगर किसी समस्या का सामना कर रहे हैं तो मुझे एक पोस्टकार्ड भेज दीजिए। मैं यथाशीघ्र आपसे संपर्क कर के पूरी तत्परता से आपकी मदद करूंगा। मेरी बातों से शिक्षक काफी हद तक सहमत हुए।

साथियों की दूसरी शिकायत थी कि मैंने पिछले चुनाव के समय कहा था कि रोसड़ा में शिक्षक-संघ भवन के लिए ज़मीन खरीद ली जाएगी और अब तक इस दिशा में कुछ नहीं हुआ है। मैंने कहा, अगर सभी शिक्षक साथी इस काम के लिए अपने एक दिन का वेतन दे दें तो ज़मीन खरीदने में कोई दिक्कत नहीं होगी। इस प्रस्ताव पर तत्काल सबकी सहमति बन गई। सभी शिक्षक साथियों ने कहा कि वे लोग उसी महीने अपने एक दिन का वेतन दे देंगे। मैंने जवाब में कहा कि आप लोग समझ लीजिए कि ज़मीन ख़रीद ली गई। इस बातचीत के बाद मेरे नाम पर एक बार फिर से सहमति बन गई और मुझे एक बार फिर सर्वसम्मति से अनुमंडल अध्यक्ष चुन लिया गया। वापस आकर मैंने चंदे की रसीद छपवाई और स्कूलों को भिजवा दी। शिक्षकों ने पूरी तत्परता से एक दिन के वेतन के बराबर चंदा भिजवा दिया और रोसड़ा अनुमंडल भवन के लिए ज़मीन ख़रीद ली गई।

जिला माध्यमिक शिक्षक संघ, समस्तीपुर के पास भी ज़मीन नहीं थी। मेरे विद्यालय के सचिव रामनंदन बाबू का एक प्लॉट समस्तीपुर के एक सिनेमा हॉल के पास था। मैंने उनसे अनुरोध किया कि वे अपना प्लॉट शिक्षक-संघ के लिए दान कर द.। उन्होंने कहा कि वे दान तो नहीं कर पाएंगे, लेकिन अगर संघ उस ज़मीन की कीमत दे दे तो किसी अन्य व्यक्ति को बेचने की अपेक्षा संघ को ज़मीन देना वे पसंद कर.गे। अंततः संघ को वह ज़मीन मिल गई। आज जिला माध्यमिक शिक्षक संघ, समस्तीपुर का जो भवन है वह उसी ज़मीन पर खड़ा है।

संघ के प्रति मेरी निष्ठा के कारण ही मुझे समस्तीपुर जिला माध्यमिक शिक्षक संघ की ओर से राज्य कार्यकारिणी के सदस्य के रूप में चुना गया। बिहार माध्यमिक शिक्षक संघ की कार्यकारिणी में बिहार के प्रत्येक डिस्ट्रिक्ट से एक कार्यकारिणी सदस्य होता था। बिहार राज्य माध्यमिक शिक्षक संघ को राज्य के समस्त शिक्षकों के कल्याण के लिए कार्यक्रम की रूपरेखा बनानी पड़ती थी। जिस समय मैं राज्य की कार्यकारिणी का सदस्य था उस समय श्री जगदीश शर्मा माध्यमिक शिक्षक संघ, बिहार के अध्यक्ष थे और चंद्रेश्वर नारायण सिंह सचिव थे। संघर्ष और आन्दोलन के अलावा राज्य की कार्यकारिणी में शिक्षा के स्तर में सुधार पर भी बात. होती थीं। शैक्षणिक कार्यक्रम के संचालन के लिए प्रत्येक जिला में शिक्षा-गोष्ठी नाम की एक इकाई होती थी। प्रत्येक जिला में किसी शिक्षक को शिक्षा-गोष्ठी का अध्यक्ष चुना जाता था। शिक्षा-गोष्ठी का कार्य शिक्षा में सुधार पर विचार करना होता था। जिला स्तर से जो सुझाव आते थे उन पर राज्य की कार्यकारिणी में विचार होता था। शिक्षा में सुधार के साथ-साथ शिक्षक-आंदोलन की रणनीतियों पर भी चर्चा होती थी और प्रायः ऐसी चर्चाओं में असहमति के स्वर भी उभरते थे। ऐसा एक प्रसंग मुझे याद है। एक बैठक में सचिव चंद्रेश्वर नारायण सिंह जी ने यह प्रस्ताव दिया कि शिक्षक उस वर्ष माध्यमिक बोर्ड की परीक्षा की कॉपी जांचने में सहयोग नहीं करेंगे और मूल्यांकन की तिथि से ही शिक्षक आंदोलन पर चले जाएंगे। सरकार को शिक्षकों की समस्याओं के प्रति आगाह करने के लिए यह प्रस्ताव कार्यकारिणी के समक्ष प्रस्तुत हुआ था। इस प्रस्ताव पर कार्यकारिणी में दो प्रकार के विचार थे। कुछ सदस्य इससे सहमत थे जबकि अन्य सदस्यों को लग रहा था कि इससे शिक्षकों का तात्कालिक हित प्रभावित होगा जिसकी वजह से बहुत सारे शिक्षक इससे ख़ुश नहीं होंगे। दरअसल कॉपी जांचने के एवज़ में शिक्षकों को कुछ पारिश्रमिक मिल जाता था। उस समय वेतन का भुगतान अनियमित था इसलिए इस तरह की राशि शिक्षकों के लिए मायने रखती थी। आख़िर जब इस प्रस्ताव पर सहमति नहीं बनी तब इसके लिए वोटिंग हुई। कार्यकारिणी में बहुमत से यह प्रस्ताव पारित हो गया। जो शिक्षक इस प्रस्ताव पर सहमत नहीं थे उन्होंने इस पर पुनर्विचार करने का अनुरोध किया। पुनर्विचार के बाद लगातार तीसरी बार भी अधिक वोट सचिव के प्रस्ताव के समर्थन में ही आए। मैं भी इस प्रस्ताव के विरोध में था। अंत में मैंने कहा कि राज्य की कार्यकारिणी से अधिक सक्षम पार्षदों की कमिटी है। चूंकि इस प्रस्ताव पर कुछ साथियों का ज़ोरदार विरोध है इसलिए पार्षदों की कमिटी के समक्ष इसे विचार के लिए रखा जाना चाहिए। मेरी यह बात मान ली गई। इस प्रस्ताव पर पार्षदों ने विचार किया और उस कमिटी में यह पारित नहीं हुआ। अन्ततः मूल्यांकन की तिथि से आंदोलन शुरू नहीं हुआ।

बिहार माध्यमिक शिक्षक संघ का कार्यालय जमाल रोड, पटना में है। वहां माध्यमिक शिक्षक संघ के सभी सदस्यों के ठहरने की अच्छी व्यवस्था है। माध्यमिक शिक्षक संघ की तरफ से तब 'प्राच्य-प्रभा' नाम की एक मासिक पत्रिका प्रकाशित होती थी। उस पत्रिका में मेरी एक कहानी 'संन्यासी' प्रकाशित हुई थी। मेरी एक कविता उन दिनों काफी लोकप्रिय हुई थी 'युवक! क्या तुम शिक्षक बनोगे?' इस कविता का पाठ मैंने सबसे पहले छपरा में आयोजित माध्यमिक शिक्षक संघ के राज्य सम्मेलन में किया था।

कविता लम्बी थी। कविता के प्रत्येक चरण में वाचक अध्यापन कर्म के किसी पहलू को रेखांकित करते हुए युवक से आग्रहपूर्वक पूछता है कि क्या वह शिक्षक बनना चाहेगा। युवक उत्तर में हमेशा कुछ और बनने की इच्छा जाहिर करता है। वाचक कहता है कि शिक्षक ज्ञान की गठरी को खोलकर लोगों के सामने प्रस्तुत करता है। युवक को लगता है कि अगर ज्ञान की ही बात करनी है तो वह मठाधीश बनेगा और प्रवचन करेगा। वाचक कहता है कि शिक्षक की नेतृत्वकारी भूमिका भी है- वह लोगों को आगे की राह बताता है। युवक कहता है कि अगर नेतृत्वकारी भूमिका का ही निर्वाह करना है तो मुझे नेता और मंत्री ही बनवा दो।

युवक! क्या तुम शिक्षक बनोगे?
शिक्षक पढ़ता है
सुबह-शाम लिखता है
ज्ञान की गठरी खोल
युग को बिखेरता है

युवक! क्या तुम शिक्षक बनोगे?

नहीं जी।
मुझे तो मठाधीक्षक बना दो
मठ में बैठकर

हलवा-पूड़ी खाऊंगा
अंधभक्त टोली पर मांग फरमाऊंगा
अगर कोई शिष्य बन जाए तो
मालोमाल हो जाऊंगा।

शिक्षक नेता है
शिक्षक प्रणेता है
शिक्षक जन-मन चेता है
युवक! क्या तुम शिक्षक बनोगे?

नहीं जी।
मुझे तो मंत्री बनवा दो
सभा में बैठ कर मंच हिलाऊंगा
बजट एलोकेशन में
लाखों कमाऊंगा

कविता के अंतिम हिस्से में शिक्षकों के लिए मंच से होने वाले 'गुरूर ब्रह्मा गुरूर विष्णु, गुरूर देवो महेश्वरः' जैसे आलंकारिक उद्‌बोधन का हवाला देकर युवक से पूछा गया कि क्या वह शिक्षक बनना चाहेगा। युवक पर इस आलंकारिकता का कोई असर नहीं पड़ता है :

शिक्षक ब्रह्मा है
शिक्षक विष्णु है
युवक! क्या तुम शिक्षक बनोगे?

नहीं जी। मुझे तो टिकट चेकर बना दो
अलुआ की बोरी से, बैगन की झोरी से
चवन्नी बनाऊंगा*
आठ आने पैसे में पहलेजाघाट** पहुंचाऊंगा।

इस कविता में लक्षित व्यंग्य पर श्रोताओं का समूह हंस पड़ता था, लेकिन इसमें मेरी पीड़ा भी व्यक्त हुई थी। जैसा कि पिछले अध्यायों में मैंने जिक्र किया है कि वेतन आदि की दृष्टि से कुछ बेहतर विकल्प होते हुए भी मैंने अध्यापन को अपना पेशा बनाया। पोस्ट ऑफिस की नौकरी करने गया तो मन नहीं लगा। मन अध्यापन में ही रमा हुआ था इसलिए वहां से लौट आया। मेरी पीड़ा थी कि क्या भविष्य में प्रतिभाशाली युवक स्वेच्छा से अध्यापन को एक उद्यम के रूप में चुनेंगे। यह पीड़ा आज भी है। चूंकि बेरोजगारी बहुत है इसलिए अध्यापकों की जब नियुक्ति होती है तब अभ्यर्थियों का तांता लग जाता है, लेकिन अगर अभ्यर्थियों के पास आज पोस्ट ऑफिस या रेलवे में क्लर्क की नौकरी

---

* उत्तर बिहार के पैसेंजर ट्रेन में सब्जी की बोरी ढोने वाली सवारियों से टिकट चेकर पैसे वसूलते थे। यह आम दृश्य था।

** जब गंगा पर महात्मा गांधी सेतु नहीं बना था तब उत्तर-बिहार से पटना जाने के लिए पहले पहलेजाघाट आना पड़ता था और वहां से पटना के महेन्द्रू घाट के लिए स्टीमर चलता था। उत्तर-बिहार से बहुत सारी ट्रेनें पहलेजाघाट तक आती थीं। इन रेलगाड़ियों में बिना टिकट यात्रा करने वाले यात्रियों से टिकट चेकर पैसे वसूलते थे।

का भी विकल्प हो तो क्या वे शिक्षक बनना चाहेंगे? इन्हीं प्रश्नों के साथ और अध्यापन-कर्म से लगाव के कारण मैं शिक्षक आंदोलन से जुड़ा रहा। प्रत्येक वर्ष माध्यमिक शिक्षक संघ का राज्यस्तरीय वार्षिक सम्मेलन किसी शहर में आयोजित होता था। मैं प्रायः सभी सम्मेलनों में भाग लेने जाता रहा। जहां तक मुझे याद है मैंने छपरा, धनबाद, जमशेदपुर, लखीसराय, पूर्णिया आदि में आयोजित राज्यस्तरीय वार्षिक सम्मेलनों में भाग लिया।

माध्यमिक विद्यालयों का सरकारीकरण

शिक्षक आंदोलन क्रमशः माध्यमिक विद्यालयों के सरकारीकरण की मांग पर क.द्रित होता चला गया। राज्य में कुछ गिने-चुने राजकीय विद्यालय थे। बड़ी संख्या में विद्यार्थी गैर-राजकीय विद्यालयों में पढ़ते थे और अधिकांश शिक्षक उन्हीं विद्यालयों में कार्यरत थे। ये विद्यालय सामुदायिक प्रयासों से स्थापित हुए थे और इन्हें सरकार की ओर से सीमित सहयोग मिलता था। समय आ गया था कि सरकार अब इन विद्यालयों में पढ़ने वाले विद्यार्थियों और कार्यरत शिक्षकों की पूरी ज़िम्मेवारी लें।

स्कूलों के सरकारीकरण की मांग को लेकर पहला बड़ा प्रदर्शन 12 अगस्त, 1975 को दिल्ली के वोट क्लब पर हुआ। उस समय अखिल भारतीय माध्यमिक शिक्षक-संघ के महासचिव समस्तीपुर के ई. एच. स्कूल के प्रधानाध्यापक वृंदाप्रसाद सिंह 'वीरेन्द्र' थे इसलिए शिक्षक-संघ के समस्तीपुर इकाई को ही इस प्रदर्शन का नेतृत्व करना था। मैं समस्तीपुर से राज्य कार्यकारिणी का सदस्य था और इस इकाई का एक सक्रिय सदस्य था। मैं समस्तीपुर के पांच अन्य साथियों के साथ इस प्रदर्शन में भाग लेने दिल्ली गया। दिल्ली में तब श्रीमती इन्दिरा गांधी की सरकार थी। प्रदर्शन में लगभग अलग-अलग राज्यों से दस हज़ार शिक्षक शामिल हुए। इंडिया गेट से राष्ट्रपति भवन तक शिक्षकों का मार्च हुआ। इस मार्च में दो नारे प्रमुखता से लगाए जा रहे थे :

एक मात्र है मांग हमारी
हाई स्कूल करो सरकारी

इन्दिरा तेरे समाजवाद में
शिक्षक भूखे मरते हैं

इस मार्च के बाद वोट क्लब पर शिक्षकों की एक सभा हुई जिसे अलग-अलग प्रांतों से आए प्रतिनिधियों ने सम्बोधित किया। सबने विद्यालयों के सरकारीकरण के पक्ष में अपने-अपने तर्क रखे और सरकार से इस मांग को स्वीकार करने की अपील की।

उन दिनों मेरा मित्र रामकृपाल राज्य सभा का सदस्य था। मैं और समस्तीपुर से गए मेरे साथी शिक्षक रामकृपाल के सांसद आवास पर ही ठहरे हुए थे। प्रदर्शन के बाद हम लोगों ने आगरा का ताजमहल देखा और मथुरा जाकर भगवान कृष्ण के दर्शन भी किए। आगरा और मथुरा के संक्षिप्त भ्रमण के बाद हम लोगों ने 15 अगस्त, 1975 को लालकिला पर झंडारोहण देखा। हम लोगों ने 14 अगस्त की रात को मथुरा से दिल्ली के लिए ट्रेन पकड़ी थी। 15 की सुबह हम लोगों ने दिल्ली रेलवे स्टेशन से लालकिला के लिए प्रस्थान किया। लालकिला के सामने का मैदान खचाखच भरा हुआ था। लोग 'भारतमाता की जय' के नारे लगा रहे थे। झंडारोहण के बाद प्रधानमंत्री इन्दिरा गांधी का भाषण हुआ। भाषण के अंत में श्रीमती गांधी ने बुलंद आवाज में 'जय हिन्द' का नारा लगाया। जवाब में उपस्थित जनसमूह ने एक स्वर में 'जय हिन्द' का नारा लगाया। 'जय हिन्द' के नारे से लालकिले के सामने का परिसर गूंज उठा। नारा लगाने वालों में हम भी शामिल थे। मैंने सोचा कि अभी तीन दिन पहले हम लोग इन्दिरा गांधी के विरुद्ध नारा लगा रहे थे और आज इन्दिरा गांधी के साथ नारा लगा रहे हैं। लेकिन शायद यही भारत के लोकतंत्र की ख़ूबसूरती भी है।

दो-तीन साल बाद फिर अखिल भारतीय माध्यमिक शिक्षक संघ का दिल्ली में प्रदर्शन हुआ। समस्तीपुर से कुल सोलह शिक्षकों ने इस प्रदर्शन में हिस्सा लिया। इस बीच दिल्ली में सरकार बदल चुकी थी। जनता पार्टी की सरकार थी।

प्रधानमंत्री थे श्री मोरारजी देसाई। भाई रामकृपाल मोरारजी देसाई की सरकार में श्रम राज्य मंत्री थे। इस बार भी हम लोगों ने रामकृपाल के आवास पर ही डेरा जमाया। प्रदर्शन के बाद आगरा-मथुरा जाने का कार्यक्रम फिर बना, लेकिन इस बार हम लोगों ने वृन्दावन, बरसाने की तरफ अधिक समय बिताया। नन्दगांव, बरसाने की पहाड़ी पर राधा की सुन्दर मूर्ति देखने का मौका मिला। साथ ही हम लोगों ने ब्रज के गांव देखें। एक के ऊपर एक तीन-तीन मटकी सिर पर रखकर ब्रज की स्त्रियों को पानी भरकर लाते हुए हमने देखा।

दिल्ली में आयोजित प्रदर्शनों से शिक्षक-आन्दोलन को ताकत अवश्य मिली, लेकिन विद्यालयों के सरकारीकरण की असली लड़ाई राज्य स्तर पर लड़ी गई। इस बीच सरकार बदल चुकी थी। बिहार में जनता पार्टी की सरकार के मुख्यमंत्री थे रामसुन्दर दास। नए मुख्यमंत्री के सामने कई बार सरकारीकरण की मांग रखी गई, लेकिन उन्होंने उसे अनसुना किया। अंत में सरकारीकरण के लिए सरकार पर दबाव बनाने के उद्देश्य से बिहार माध्यमिक शिक्षक संघ ने जेल भरो अभियान का आह्वान किया। इस बीच मैंने साखमोहन स्कूल से अपना स्थानांतरण दरभंगा के मनीगाछी प्रखंड में स्थित एक विद्यालय में करवा लिया था। इस स्थानांतरण की चर्चा कुछ विस्तार से अगले किसी अध्याय में होगी, बहरहाल संघ के कामों में मेरी सक्रियता यहां भी बनी रही। मैंने अपने नए विद्यालय के अध्यापकों की मीटिंग बुलाई और कहा कि जेल भरो अभियान में हमें भी शामिल होना चाहिए। विद्यालय के दो अध्यापक श्री भरत यादव और राजेन्द्र मंडल ने कहा कि अगर आप हम लोगों के साथ चलेंगे तो हमें जेल जाने में कोई दिक्कत नहीं है। मैं भी तैयार हो गया और हम तीनों ने पटना की ट्रेन पकड़ी।

जब हम लोग पटना पहुंचे तो हमने देखा कि गांधी मैदान में जेल जाने वाले शिक्षकों की भीड़ उमड़ी हुई है। दूसरी तरफ सरकार की तरफ से भी पूरी तैयारी थी। पुलिस की बंदोबस्ती थी और बिहार राज्य परिवहन निगम की बस. कतार में खड़ी थीं। घोषणा की गई कि जिन लोगों को जेल जाना है वे बस में बैठ जाएं। शिक्षक-संघ के पदाधिकारियों की ओर से निर्देश आया कि एक जिला के शिक्षक एक साथ इकट्ठा होकर बस में बैंठ.। बसें गांधी मैदान से चलीं तो दानापुर स्टेशन पर जाकर रुकीं। वहां से हम लोगों को जेल ले जाने के लिए स्पेशल ट्रेन की व्यवस्था की गई थी। प्रत्येक जिले के अध्यक्ष और सचिव अपने-अपने जिले के शिक्षकों के साथ ट्रेन में सवार होने लगे। जिला शिक्षक संघ, दरभंगा की ओर से जेल जाने वाले शिक्षकों को खाने के लिए दो-दो केले दिए गए। मैं इससे पूर्व कभी जेल नहीं गया था। सरकार की ओर से किसी प्रकार की कोई बाध्यता नहीं थी। शिक्षक स्वेच्छा से जेल जा रहे थे। गाड़ी में बैठकर ऐसा अनुभव हो रहा था कि हम लोग किसी यात्रा पर जा रहे हैं। गाड़ी खुली और भागलपुर जंक्शन पर रात के ग्यारह बजे पहुंची।

ट्रेन में पुलिस के दो-तीन सिपाही थे। शिक्षकों से कहा गया कि उन्हें सुबह जेल ले जाया जाएगा। रात में उन्हें स्टेशन पर ही विश्राम करने के लिए कहा गया। मैं पोस्ट ऑफिस की अपनी नौकरी के सिलसिले में भागलपुर में रह चुका था इसलिए मुझे इस शहर का कुछ अंदाज़ था। अपने दो शिक्षकों के साथ रात्रि विश्राम के लिए मैं धर्मशाला में चला गया। मैंने देखा कि समस्तीपुर जिले के एक शिक्षक हन्नान साहब हमारे साथ आ रहे हैं। मैंने उनसे पूंछा कि वे तो समस्तीपुर जिले में कार्यरत हैं फिर वे इस ट्रेन से भागलपुर कैसे आ गए। उन्होंने कहा मैंने तो आपको ट्रेन पर सवार होते हुए देखा। आप हमारे नेता हैं, आपको देखकर मैं उस ट्रेन में सवार हो गया। समस्तीपुर जिला से मेरे स्थानान्तरण की बात उन्हें मालूम नहीं थी। मैंने उनसे कहा कि मैं तो अब दरभंगा जिले में कार्यरत हूं और इस ट्रेन से दरभंगा, सीतामढ़ी और छपरा जिले के शिक्षक ही आए हैं। समस्तीपुर जिला के शिक्षकों के लिए शायद कोई दूसरी ट्रेन होगी। उन्होंने मुझसे अनुरोध किया कि मैं उन्हें लिख कर दे दूं कि वे भागलपुर तक आए थे, उनका जेल जाने का इरादा था, लेकिन भूलवश वे गलत ट्रेन में सवार हो गए। मैंने उनकी इच्छानुसार पर्ची लिखकर उन्हें दे दी।

अगली सुबह भागलपुर जेल के दरवाजे पर जेल जाने वाले शिक्षक इकट्ठा होने लगे। जेल का यह परिसर मैंने पहले भी देखा था, हालांकि जेल के भीतर जाने का अनुभव नहीं था। जैसाकि पिछले अध्याय में ज़िक्र आया है- जब मैं पहली बार पोस्ट ऑफिस की नौकरी के लिए भागलपुर आया था तब जेलर साहब के परिवार के साथ ही रुका था।

जेल के अधिकारियों ने कैदियों की जिलेवार सूची बनाई और फिर हमें जेल के अंदर ले गए। जेल में अंदर एक कम्बल बिछा हुआ था और बिस्तर पर ओढ़ने के लिए भी एक कम्बल रखा हुआ था। बिस्तर के बग़ल में एक ग्लास रखा हुआ था। एक थाली भी थी।

मुझे शिक्षकों ने भोजनमंत्री बना दिया। मैं दो-तीन शिक्षकों के साथ स्टोर में जाता था और वहां से चना-गुड़ लेकर शिक्षकों के बीच बांट देता था। बांटने का कार्य शिक्षक मिलजुल कर करते थे। दिन का खाना तो ठीक था। दिन में चावल, दाल और सब्जी दी जाती थी, लेकिन रात में बस रोटी और दाल। रोटी का स्वाद बहुत ही खराब था। शिक्षकों ने शोर मचाया कि सड़े हुए आटे की रोटी परोसी जा रही है। बिहार माध्यमिक शिक्षक संघ के सचिव वीरेन्द्र शर्मा भी एक बार शिक्षकों से मिलने भागलपुर जेल आए तो शिक्षकों ने उन्हें आटे का नमूना दिया। वे नमूना लेकर पटना गये, लेकिन रोटी में कोई सुधार नहीं हुआ। भोजन अन्य कैदियों के साथ ही बनता था। कैदी लोग ही खाना लेकर आते थे और शिक्षकों के बीच परोस देते थे। एक बार खाना दे देने के बाद दुबारा कोई नहीं पूछता था। शिक्षकों ने आगाह किया कि अगर खाने का स्तर नहीं सुधरा तो वे आंदोलन करेंगे। शिक्षकों ने मांग रखी कि उनके खाने की व्यवस्था अलग से की जाए। जेल प्रशासन ने शिक्षकों की बात सुनी और उनके खाने की व्यवस्था अलग कर दी गई।

जेल में बैरक को छह बजे शाम से ही बन्द कर दिया जाता था। एक-दो दिन ऐसा हुआ कि रात्रि का भोजन भी दिन में 5 बजे दे दिया गया। एक कैदी ही संतरी के रूप में बैरक में आता था और कैदी-शिक्षकों की गिनती कर लिया करता था। इसके बाद अपने-अपने बिछावन पर हम लोगों को सो जाना पड़ता था।

शिक्षकों ने मांग की कि उनका बैरक छह बजे नहीं बन्द किया जाए। हम लोगों ने सायंकाल में सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित करने का निर्णय लिया। जेल प्रशासन ने हमारा यह अनुरोध भी स्वीकार कर लिया। भागलपुर के एक शिक्षक थे माधव जी। उन्होंने मुझसे मेरे बैरक में आकर कहा कि सांस्कृतिक कार्यक्रम की अध्यक्षता आपको करनी पड़ेगी। मैंने अध्यक्षता करने की स्वीकृति दे दी।

बैरक के बाहर एक बरगद का पेड़ था। उसी के नीचे एक-दो कम्बल बिछाकर मंच बना दिया जाता था। उसी पर हम लोग बैठ जाते थे। क्रम-क्रम से सभी शिक्षक बैरक से बाहर आकर उसी पेड़ के नीचे बैठ जाते थे। हम लोगों की संख्या 735 थी। अच्छी-खासी भीड़ इकट्ठा हो जाती थी। होली का समय था। कुछ शिक्षक थाली बजाकर ही होली गाते थे। कुछ अध्यापक अपनी कविता का पाठ करते थे। माधव जी अच्छे गायक थे। वे अपना गाना प्रस्तुत करते थे। हास्य और व्यंग्य भी मंच से प्रस्तुत किया जाता था। जेल में सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत करके हम लोग एक अलग ही समां बांध दिया करते थे। खाने में भी सुधार हो गया। कभी-कभी शिक्षक बैरक के अन्दर भी थाली बजाकर होली गाते थे। वयस्कों का समूह भी अवसर मिलने पर बच्चों जैसा व्यवहार करने लगता है। कभी-कभी लगता था कि यह शिक्षकों का समूह नहीं, बल्कि किशोरों का समूह है।

हमारे बीच एक शिक्षक पंडित जी थे। वे मुसलमान शिक्षक के साथ बैठकर खाना नहीं खाना चाहते थे। जब हम लोग खाने के लिए बैठते तो खाने के समय कोई एक शिक्षक मुसलमान शिक्षक साथी का हाथ पकड़ लेता था और अपना दूसरा हाथ किसी दूसरे शिक्षक साथी की ओर बढ़ा देता था। फिर क्रम-क्रम से प्रत्येक शिक्षक एक-दूसरे का हाथ पकड़ लेते थे। इस प्रकार मुसलमान शिक्षक साथी से शुरू होकर एक मानव-शृंखला निर्मित हो जाती थी। जब पंडित जी को इस मानव-शृंखला से जोड़ने की कोशिश की जाती तो वे अपनी थाली लेकर दूसरी पंक्ति में भाग जाते थे। उनके इस आचरण से मुसलमान साथी सहित तमाम शिक्षक हंसने लगते थे। पंडित जी को खुद भी हंसी आ जाती थी।

हम लोग करीब ग्यारह दिन जेल में रहे। एक दिन अचानक घोषणा हुई कि रामसुन्दर दास जी की सरकार गिर गई है। रामसुन्दर दास ऐसे मुख्यमंत्री थे जो शिक्षकों के प्रतिनिधि से बात नहीं करना चाहते थे। शिक्षक किसी हद तक ख़ुश थे कि आंदोलन के बाद विद्यालयों का सरकारीकरण तो नहीं हुआ, लेकिन रामसुन्दर दास की सरकार गिर गई। सरकार गिरने के बाद शिक्षकों को जेल से छोड़ देने का आदेश आया। आदेश आने के अगले ही दिन हम लोगों को जेल से छोड़ दिया गया।

रामसुन्दर दास जी की सरकार गिरने के बाद डॉ. जगन्नाथ मिश्र की सरकार बनी और हमने एक दिन अचानक सुना कि 2 अक्टूबर, 1980 से सभी माध्यमिक विद्यालयों का सरकारीकरण कर दिया गया है। इस घोषणा से अध्यापकों में प्रसन्नता की लहर फैल गई। माध्यमिक शिक्षकों को वे सारी सुविधाएं देने की घोषणा हुई जो सरकारी कर्मचारियों को दी जाती थीं। आख़िर शिक्षकों का आन्दोलन सफल हुआ। बीच में परिस्थिति कुछ ऐसी भी बन गई थी कि माध्यमिक विद्यालय के कुछ शिक्षकों ने मिडिल विद्यालयों में जाना शुरू कर दिया था। क्योंकि मिडिल विद्यालयों में वेतन भुगतान नियमित रूप से होता था और माध्यमिक विद्यालयों की सरकार अब तक उपेक्षा करती चली आ रही थी। माध्यमिक विद्यालयों के सरकारीकरण से यह विसंगति दूर हो गई।

तुम इस स्कूल से ट्रान्सफर करवा लो

पिछले अध्याय में मैंने ज़िक्र किया है कि साखमोहन उच्च विद्यालय में मैं प्रायः हर वर्ष तुलसी जयन्ती का आयोजन करता था। 1975 ई. की बात है। अगस्त का महीना था। मैंने तुलसी जयन्ती की चर्चा की तो मेरे साथी शिक्षक श्री हरिशंकर पाठक जी ने बताया कि पड़ोस के उच्च विद्यालय के प्रधानाध्यापक शशांक जी तुलसी साहित्य के अच्छे अध्येता और जानकार हैं। हम लोगों ने उस वर्ष की जयन्ती के लिए उन्हें बुलाने का मन बनाया। 19 अगस्त, 1975 को मैं हरिशंकर पाठक जी के साथ शशांक जी से मिलने गया। शशांक जी ने आमंत्रण स्वीकार किया। रात आठ बजे के लगभग मैं उनके पास से अपने घर लौट आया।

उस समय मेरी बड़ी बेटी पूनम एम.डी.डी.एम. कॉलेज, मुजफरपुर में पढ़ रही थी। दूसरी बच्ची पुष्पा उस समय ननिहाल में थी। मनोज और प्रवीण हम लोगों के साथ थे। रात्रि-भोजन के बाद मैं तुलसी पर एक कविता की रचना करने लगा। करीब 11:45 बजे रात तक काम करने के बाद मैं सो गया। मेरे साथ मनोज सोया था। दूसरे कमरे में प्रवीण अपनी मां के साथ सो रहा था।

करीब 12 बजे मेरी आंखों पर टार्च की तीखी रोशनी पड़ी। मुझे लगा कि शायद मेरी पत्नी किसी काम से बरामदे में गई हों और गलती से टार्च इस तरफ जल गयी हो, लेकिन टार्च की रोशनी मेरी आंखों पर स्थिर हो चुकी थी। कुछ खीझ से और कुछ डर से मैंने पूछा कौन है बाहर। उधर से कड़कती हुई आवाज आई कि चुपचाप दरवाजा खोल दो नहीं तो गोली मार दूंगा। तब तक मेरी पत्नी ने बाहर बरामदे में पांच-सात लोगों को देख लिया था और उन्होंने मुझे आगाह किया कि बाहर बहुत सारे लोग हैं इसलिए मैं दरवाजा नहीं खोलूं। लेकिन तब तक मैं दरवाजा खोल चुका था। अंदर घुसते ही एक व्यक्ति ने मेरे ऊपर बन्दूक तान दी और मुझसे सख़्त आवाज में पूछा कि 'चाबी कहां है? माल दिखाओ।' मैंने अलमारी खोलकर दराज़ उसके सामने रख दी। संयोग से उस दिन मेरे पास नगद के नाम पर बस दस रुपए थे। उन दिनों ऐसा होना आश्चर्य की बात नहीं थी, लेकिन डकैतों को विश्वास नहीं हुआ कि मेरे पास सिर्फ इतने ही नगद होंगे। उस आदमी ने फिर कड़कती हुई आवाज में लगभग डपटकर मुझसे कहा कि माल दिखाओ नहीं तो गोली मार दूंगा। इस बार मैंने साहस बटोर कर कहा कि अगर आप लोग मुझे गोली ही मारने आए हो तो वही पहले कर लो। मेरे पास जो कुछ भी अलमारी में था मैंने दिखा दिया। बाकी जो कुछ है घर में वह आप लोगों के सामने ही है। उसके बाद उन्होंने मेरी कलाई से घड़ी उतरवाई। मेरी पत्नी की कान की ओर इशारा किया। उन्होंने अपनी सोने की बाली उतारकर दे दी। उसमें से एक व्यक्ति ने साइकिल बाहर निकाली, दूसरे ने रेडियो को हस्तगत किया। तीन-चार व्यक्ति घर के नए-पुराने कपड़े, खाने-पीने के सामान बटोर-बटोर कर पोटली बनाने लगे। बंदूकधारी व्यक्ति ने लगातार मेरे ऊपर बन्दूक ताने रखी। इस दौरान मनोज की नींद खुल चुकी थी। वह चुपचाप बिस्तर पर बिना कोई प्रतिक्रिया किए बैठ गया। प्रवीण छोटा था और दूसरे कमरे में सो रहा था। घर में खटर-पटर से उसकी नींद खुल गई और वह रोने लगा। डकैतों के सरदार ने मेरी पत्नी से कहा कि बच्चे को चुप करवाओ। यह सब कुछ लगभग आधे घंटे तक चला, फिर सारा सामान समेटकर डकैत पश्चिम दिशा की ओर निकल पड़े। जाते-जाते एक व्यक्ति ने कहा कि तुम विद्यार्थियों को फेल बहुत करते हो। इस स्कूल से ट्रांसफर करवा लो। मैंने कहा 'ठीक है, मैं वैसा ही करूंगा।' हालांकि मुझे पता था कि जिस प्रकार के विद्यालय में मैं कार्यरत हूं उसमें स्थानांतरण का कोई प्रावधान नहीं है। वैसे

मैंने शायद ही कभी किसी विद्यार्थी को अपनी ओर से फेल किया होगा। शिक्षक और प्रधानाध्यापक के रूप में हमारी हमेशा यह कोशिश रहती थी कि विद्यार्थी अच्छे रिज़ल्ट के साथ पास हो जाएं।

डकैतों के निकलते ही मूसलाधार बारिस होने लगी। मैं स्तब्ध था। पिछले आधे घंटे में सब कुछ बदल चुका था। कुछ घण्टे पहले मैं शशांक जी और पाठक जी के साथ तुलसी के साहित्य की चर्चा कर रहा था, तुलसीदास पर कविता की पंक्तियां जोड़ रहा था और अब बंदूक, धमकी, बारिस की सुनसान रात, बियाबान में स्थित मेरा आवास। स्कूल के भवन में दोनों आदेशपाल सो रहे थे। स्कूल के ही एक कमरे में साइंस टीचर कपिलेश्वर बाबू भी सोते थे। मुझे उन लोगों की चिन्ता हुई। मैंने पत्नी से कहा कि मैं उन्हें देखकर आता हूं। उसने कहा आप यहां ठहरिए, शायद आप पर कोई नज़र रख रहा हो, मैं जाती हूं। जब वह वहां गईं और दोनों आदेशपाल को जगाया तो वे जग तो गए, लेकिन अपना दरवाजा ही नहीं खोल पा रहे थे। तब तक कपिलेश्वर बाबू भी अपने कमरे से निकल कर आ गए। जब उन्होंने डकैती की बात सुनी तो वे सन्न रह गए। कपिलेश्वर बाबू को यह समझने में देर लगी कि आदेशपाल जिस कमरे में सो रहे थे उसके दरवाजे की कुंडी को बाहर से तार लपेटकर बंद कर दिया गया था। जाहिर है ऐसा डकैतों ने ही किया होगा। इससे यह भी पता चला कि सब कुछ पूरी तरह सुनियोजित था।

कपिलेश्वर बाबू और दोनों आदेशपाल - अर्जुन और रेशमी ने जब मेरे घर की हालत देखी तो वे सन्न रह गए। बारिस बहुत तेज हो रही थी इसलिए उस समय कहीं सूचना देने जाना भी संभव नहीं था और उस समय वे लोग शायद हमें अकेला छोड़ना भी नहीं चाहते थे। सुबह चार बजे के आसपास बारिस थमने पर रेशमी सचिव महोदय के घर के लिए निकला। उन्हें डकैती की घटना से मेरे घर की स्थिति से अवगत करवाया। हालत यह थी कि डकैत अलगनी पर सूख रहे कपड़े भी लेकर चले गए थे, खाने-पीने का सामान तो ले ही गए थे। जाहिर है इस डकैती की योजना किसी ऐसे व्यक्ति ने बनवाई थी जो नहीं चाहता था कि मैं उस स्कूल में रहूं।

सुबह रामनन्दन बाबू कुछ कपड़े और खाना आदि का सामान लेकर आए। सचिव महोदय ने कहा कि हम लोगों को थाना चलकर डकैती की सूचना देनी चाहिए। हम लोगों ने पैदल ही थाना जाने के लिये प्रस्थान किया। करीब ग्यारह बजे सचिव महोदय के साथ मैं विभूतिपुर थाना पहुंच गया। दरोगाजी को सारी बातें बताईं। उन्होंने कहा कि यह छात्रों द्वारा आपको तंग करने का मामला लगता है। मैंने कहा कि आप इस घटना को गंभीरता से नहीं लेना चाह रहे हैं। छात्र बन्दूक के साथ रात में मुझे परेशान करने आएंगे? एक शिक्षक और प्रधानाध्यापक के रूप में मुझे पता है कि छात्र किस प्रकार की बदमाशी कर सकते हैं। आप लोग थाने में बैठकर ही स्थिति का अनुमान लगा लेते हैं। आपने प्राथमिकी दर्ज नहीं की तो मैं एस.पी. साहब से मिलने समस्तीपुर जाऊंगा। उसी समय संयोग से थाने में डीएसपी आ गये। उन्होंने स्टेशन अफसर को प्राथमिकी दर्ज करने का आदेश दिया। एफ.आई.आर. नोट करने के बाद करीब एक बजे दिन में विद्यालय पहुंचकर पुलिस के लोगों ने स्थल का निरीक्षण किया। दूसरे दिन निकटवर्ती ग्राम से करीब छह व्यक्तियों को पकड़ा। ये लोग पुलिस की सूची में दाग़दार व्यक्ति के रूप में अंकित थे। एक दिन थाने में रखने के बाद उन लोगों को समस्तीपुर जेल भेज दिया गया। शक के आधार पर ही इन लोगों को पकड़ा गया था। गिरतार व्यक्तियों में साखमोहन का कोई भी नहीं था।

डकैती के बाद अब विद्यालय में रहना सम्भव नहीं रह गया था। सचिव महोदय ने कहा कि आप मेरे घर पर ही चलें। वहां आपके और विज्ञान शिक्षक के रहने की व्यवस्था की जाएगी। सचिव महोदय के छोटे भाई लक्ष्मीरमण जी थे। वे उस समय गांव के मुखिया भी थे। उन्होंने अपने आंगन का आधा हिस्सा मुझे रहने के लिए दे दिया। मैं अब वहीं रहने लगा। विज्ञान शिक्षक भी उनके दरवाजे पर ही रहने लगे। पूर्व की भांति विज्ञान शिक्षक मेरे साथ ही खाना खाने लगे। विद्यालय से लक्ष्मी बाबू का घर दो किलोमीटर दूर था। वहां से मैं साइकिल से विद्यालय आने-जाने लगा।

हालांकि डकैती के बाद मैंने फिर से स्कूल के काम में अपना मन लगाना शुरू किया, लेकिन आवास की नई व्यवस्था का असर मेरे काम पर पड़ा। परिस्थितियां तेज़ी से बदल रही थीं। गांव में तनाव बढ़ रहा था और उसका असर मेरे काम पर भी पड़ रहा था। जब मेरा आवास विद्यालय परिसर में था तब मैं गांव की चौहद्दी से बाहर रहता था। अब

मैं गांव में आकर रहने लगा। मेरी कोशिश थी कि लोग स्कूल को गांव के किसी गुट से जोड़कर नहीं देखें और मुझे गांव से बाहर का एक निष्पक्ष शिक्षक-कर्मचारी समझें। रामनन्दन बाबू का प्रयास रहता था कि मुझे किसी प्रकार की ग्रामीण राजनीति में नहीं शामिल किया जाए, लेकिन उनके विरोधी शायद मुझे एक निरपेक्ष व्यक्ति के रूप में नहीं देख पाते थे। पहले भी मैं रामनंदन बाबू के साथ काम करता था, लेकिन मेरा आवास विद्यालय में था। अब मैं उनके परिवार के साथ रहने लगा था।

गांव के जो आम लोग थे, जो निष्पक्ष थे उनकी सहानुभूति मेरे प्रति डकैती के बाद और बढ़ गई थी, लेकिन गांव में निष्पक्ष लोग बहुत कम रह गए थे। गांव में रहने के बाद मुझे अहसास होने लगा कि पिछले दस वर्षों में साखमोहन गांव काफी बदल चुका है।

फिर भी सब कुछ भूल कर मैं अपने काम में मन लगाने लगा। विद्यालय से स्थानांतरण इतना आसान नहीं था। वर्षों के संघर्ष के बाद अब जाकर मेरी आमदनी का स्रोत कुछ निश्चित होने लगा था। सन 1975 में शिक्षक संघ के वर्षों के संघर्ष के बाद बिहार सरकार ने माध्यमिक शिक्षकों के वेतन की गारंटी कर दी थी, हालांकि विद्यालयों का सरकारीकरण बाद में हुआ। वेतन की गारंटी के बाद विद्यालय की पूरी आमदनी सरकारी ख़ज़ाने में जमा करवानी पड़ती थी और सरकार की ओर से शिक्षकों के वेतनमान के अनुसार वेतन का भुगतान कर दिया जाता था। मेरी अपनी पारिवारिक ज़िम्मेदारियां थीं और मैं इस नौकरी से होने वाली आमदनी पर निर्भर था।

डकैती के बाद जनसहयोग से मैंने विद्यालय में कवि सम्मेलन का आयोजन किया जिसका जिक्र पहले आया है। कवि सम्मेलन सफल रहा। शिक्षक संघ के कामों में मैं पूर्व की भांति जुटा रहा। विद्यालय की गतिविधियां सुचारु रूप से चलती रहीं। साखमोहन विद्यालय अब लगभग एक दशक पुराना हो चला था। विद्यालय पर विद्यार्थियों और अभिभावकों को भरोसा था। जब तक मैं विद्यालय में होता, तब तक मुझे सब कुछ सामान्य लगता। लेकिन विद्यालय से लौटकर गांव में आने के बाद ग्रामीण जीवन के तनाव का अहसास गहरा होता चला जाता था। ◆

[क्रमशः]

लेखक परिचय : श्री श्याम नारायण मिश्र चन्दौना गांव, जिला-दरभंगा (बिहार) के रहने वाले हैं। उनका जन्म 1934 ईस्वी में हुआ। जिस वर्ष देश आजाद हुआ उस वर्ष वे सातवीं कक्षा के विद्यार्थी थे। जिस समय वे मैट्रिकुलेशन के परीक्षार्थी थे उसी समय देश का संविधान लागू हुआ और देश में पहला आम चुनाव भी हुआ। 1950 के दशक में उन्होंने विज्ञान शिक्षक के रूप में नौकरी शुरू की। बीच में उन्हें पोस्ट ऑफिस की पक्की नौकरी भी मिली, लेकिन जब वहां उनका मन नहीं रमा तो लौट कर फिर से अध्यापन में जुट गए। आगे चलकर वे कई दशकों तक प्रधानाध्यपक के रूप में एकाधिक विद्यालयों से जुड़े रहे। इस दौरान शिक्षक-आंदोलन और अन्य सामजिक-शैक्षणिक गतिविधियों में भी उनकी सक्रियता रही। उनकी कुछ रचनाएं बिहार माध्यमिक शिक्षक संघ की पत्रिका 'प्राच्य प्रभा' में प्रकाशित हुईं। 'सदानीरा' और 'परिमल' शीर्षक से प्रकाशित दो सम्पादित काव्य संग्रहों में उनकी कुछ कविताओं को शामिल किया गया। शिक्षक-आंदोलन के दौर में उनकी एक कविता- 'युवक, क्या तुम शिक्षक बनोगे' को काफी सराहना मिली।

संपर्क : 7019269187; manoj_maee@yahoo.in